महिलाओं एवं बालिकाओं की सुरक्षा, सम्मान एवं स्वावलम्बन हेतु सन्चालित
उत्तर प्रदेश सरकार की "मिशन शक्ति अभियान" योजना पर आधारित

मिशन शक्ति के विविध आयाम

प्रधान सम्पादक

डॉ. प्रभात कुमार सिंह

संयोजक, मिशन शक्ति अभियान

सहायक आचार्य–संस्कृत विभाग
स्वतंत्रता संग्राम सेनानी विश्राम सिंह
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
चुनार, मीरजापुर, उ.प्र.

सम्पादक

डॉ. शेफालिका राय

सहसंयोजक, मिशन शक्ति अभियान

सहायक आचार्य–अर्थशास्त्र विभाग
स्वतंत्रता संग्राम सेनानी विश्राम सिंह
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
चुनार, मीरजापुर, उ.प्र.

परिमल पब्लिकेशन्स

दिल्ली

11.	महिलाओं एवं बालिकाओं के सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका –मो. वकार रज़ा	118–123
12.	लैंगिक समानता:एक विमर्श–राजकिशोर पाण्डेय	124–132
13.	महिलाओं विषयक कानूनी प्रावधान आलोक कुमार राय	133–144
14.	इक्षुगंधा में स्त्रियों की सामाजिक प्रस्थिति डॉ. संजय कुमार	145 –157
15.	किशोरावस्था की बालिकाओं के लिए संतुलित आहार – डॉ. स्मिता गौतम	158–177
16.	महिला सशक्तीकरण एवं शिक्षा मिशन शक्ति के विशेष सन्दर्भ में –डॉ. दिनेश कुमार यादव	178–183
17.	महिला सशक्तिकरण के विभिन्न आयाम डॉ मनोज कुमार अवस्थी	184–189
18.	नारी सुरक्षा, सम्मान का भारतीय सन्दर्भ व मिशन शक्ति की सामयिक उपादेयता–डॉ. धर्मेन्द्र कुमार	190–194
19.	Women Malnutrition in India Dr. Anjali Agrawal	195-202
20.	The Ashtalakshmi Form of Nari Shakti Dr.Sreeja.J.P	203-210
21.	Economic Empowerment of Women under "Mission Shakti" Programme of Uttar Pradesh Government: Problems and Solutions. Dr.Rohit Kumar Rai, Dr.Priyanka Rai	211-225
22.	Indian ethnomedicines as potent immunity booster to cope up against Covid-19 –Miss Shikha Tiwari	226-233

इक्षुगंधा में वर्णित स्त्रियों की सामाजिक प्रस्थिति

डॉ. संजय कुमार*

उत्तर प्रदेश सरकार की 'मिशन शक्ति' योजना स्त्रियों एवं बालिकाओं की सुरक्षा ,सम्मान तथा स्वालम्बन की दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्यक्रम है, यह कार्यक्रम स्त्री संरक्षण एवं संवर्धन पर केन्द्रित है। इस रूप में भारत सरकार व प्रादेशिक सरकारों के द्वारा अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से स्त्रियों की जीवन दशा को सुधारने का प्रयास निरन्तर चल रहा है। इसी सद्प्रयास में साहित्य भी लगा हुआ है। लेकिन साहित्य की अपनी भाषा और शैली होती है; वह अपने अनुसार ही विषय को गढ़ता है जिसका उद्देश्य लोक कल्याण के साथ – साथ पथ प्रदर्शन भी होता है । इस दृष्टि से लेखक समाज के कभी शुभ पक्ष को रखता है तो कभी अशुभ पक्ष को अपना काव्य विषय बनाता है लेकिन दोनों का उद्देश्य स्वस्थ समाज की स्थापना ही होती है इसी रूप में आधुनिक संस्कृत कथा साहित्य परम्परा में आचार्य अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा प्रणीत "इक्षुगंधा" कथासंग्रह का महत्त्वपूर्ण स्थान है । इस कथासंग्रह में कवि व्यावहारिक धरातल पर उतर कर स्त्री जीवन के व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन शैली का जो स्वरूप प्रकाशित किया

*सहायक आचार्य ,संस्कृत विभाग, डॉ.हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर (म.प्र.)

है वह हमारे भारतीय परिवेश के सामने एक बहुत बड़ा प्रश्न उपस्थित करता है। इस संग्रह के माध्यम से कवि ने स्त्री संरक्षण, स्वाभिमान, अधिकार और कर्त्तव्य को उद्‌घाटित करते हुए उनके शोषण की ओर भी हमारे ध्यान को आकर्षित किया है। कवि क्रान्तदर्शी होता है; अतः वह अपने रचना संसार के व्याज से ही संसार की वस्तुस्थिति का सम्यक् बोध समाजशास्त्रियों को कराता है। समाज के दो अंग हैं –स्त्री और पुरुष। लेकिन पुरुष स्वत्रन्त्र जन्मा हुआ शक्तिशाली प्राणी बन गया है। वह अपने भाव एवं कर्त्तव्य पालन में स्वयं को सक्षम पाता है लेकिन वहीं स्त्री सदैव पुरुषों की मुखापेक्षी ही बनकर रहती है । उसका सोना, जागना, हँसना, बोलना, खाना, पीना, यहाँ तक की रोना भी पुरुषों के अधीन ही रहता है। इन्हीं कुछ प्रश्नों को अपने साथ लेकर इक्षुगंधा अवतरित होती है। किसी भी राष्ट्र की सभ्यता एवं संस्कृति के निर्माण एवं विकास में स्त्री का विशेष योगदान होता है। वह समाज की धुरी के रूप में स्थित होकर सम्पूर्ण भार को वहन करती है परन्तु समाज के द्वारा उसे सदैव उत्पीड़ित किया गया। यदि हम भारतीय संस्कृति की बात करें तो वहाँ उनका स्थान प्राचीन समय से ही गौरवपूर्ण रहा है। उनके गौरव के आकर्षण से संस्कृत जगत सदियों से सहृदय मन को रंजित भी करता है। त्याग और तपस्या ही स्त्री जीवन का सर्वस्व है। उसी के बल पर समाज में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। साहित्य समाज का दर्पण माना जाता है, इसीलिए साहित्य भी स्त्री जीवन के चरित्र उकेरने में किसी प्रकार की कमी नहीं बल्कि **"यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता"**[1] का उद्‌घोष ही किया है । धीरे–धीरे साहित्य की गति आगे बढती है। वह समाज के सभी दृश्यों को साहित्य पटल पर लाने का प्रयास करती है। संस्कृत अपने प्राचीन परंपरा के रूप में कथासरित सागर,पंचतन्त्र एवं हितोपदेश की बहुमुखता को आत्मसात कर अन्य भाषाओं के समान आधुनिक परिपेक्ष में कथासाहित्य पर लेखन कार्य में प्रवृत्त हुई है। यहाँ समाज की विविधता इस रूप में चित्रित हुई है कि साहित्य अपने

अतीत को देख कर आशु गिराने के लिए बाध्य होने लगा है। जब मूल्यों का पतन होता है। तब समाज में अनेक प्रकार के कृत्याकृत स्वतः जन्म लेने लगते हैं। जिसका अंकन साहित्य का समाज चित्रण कहा जाता है। पहले साहित्य में सीता, सावित्री, तारा, द्रौपदी और मन्दोदरी के चित्रण एवं स्वाभिमान की झलक मिलती थी और अब तपती, वंदना और अनामिका की विवशता और निरीहतापूर्ण कारुणिक चित्रण से सह्रदय मन वहलाव का अस्वाभाविक प्रयास करता है।

वस्तुतः तपती,वंदना और अनामिका आदि प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा रचित इक्षुगंधा के ही पात्र हैं। इक्षुगंधा अष्ट कथासंग्रह मञ्जूषा है। जिसमें लेखक ने स्त्री जीवन के विविध विकल जीवन को चित्रित किया है। एक स्त्री का जीवन किन –किन विकट परिस्थितियों से घिरा रहता है, इसका स्पष्ट निदर्शन इक्षुगंधा में मिलता है। लेखक द्वारा दिया गया इसका इक्षुगंधा नामकरण भी कास की गंध के समान श्वेतता और सहजता के साथ – साथ निःसारता को व्यक्त करता हुआ जिजीविषा नामक कथा से एक नारी जीवन के निःसारता एवं स्त्रीत्व को रेखाँकित करने का प्रयास करता है। इस कथा में एक तपती नामक युवतिपात्र है। जिसके पिता ह्रदयाघात के कारण इस धरा – धाम को हमेशा – हमेशा के लिए छोड़ कर स्वर्गलोक पधार चुके हैं । उसके परिवार में छोटे भाई, बहन और माँ हैं। परिवार की सम्पूर्ण जिम्मेदारी तपती पर है। तपती पर इसलिए कि उसकी माँ गृहिणी से अतिरिक्त किसी भी विषय को कभी जाना ही नहीं। पति और बच्चों की देख – भाल ही उसके जीवन की पूजा थी । तपती के भाई – बहन उससे बहुत छोटे हैं । इसलिए वह चाहती कि उसे कोई नौकरी मिल जाये, जिससे वह आत्मनिर्भर बन सके और परिवार का भरण–पोषण भी सहजता से चलता रहे। भाई–बहन के स्वास्थ्य एवं समुचित शिक्षा उपलब्ध कराना उसका मात्र एक लक्ष्य है। इस पवित्र लक्ष्य को पाने के लिए तपती बहुत प्रयास करती है, लेकिन

आज का समाज किसी नारी की योग्यता नहीं देखता अपितु रूप – यौवन का ही प्यासा है। लेखक स्वयं इस विषय में लिखता हैं–

"कियन्न प्रयतितँ तपत्या!किन्तु कःश्रृणोति? न कुत्रापि गुणशिक्षाशीलमूल्यम्। सर्वत्रैव यौवनमूल्यम्। क्व गोपयेद् वराकी स्वकीयाँ तप्तकाञ्चनदेहयष्टिम्। स्थूल– कुवलयनिभेनयने परिणतविम्बफलप्रतिमं अधरकुसुमम्। रूपनिपानोत्तरणोडुपतुल्यं समुन्नतपयोधरयुगलम्। किन्नरीसन्निभा तपती स्वरूपलावण्य–सम्पदं क्व नयेत्?"[2]

अर्थात् तपती ने कितना प्रयत्न नहीं किया परन्तु कौन सुनता है? गुण शिक्षा एवं शील की कहीं भी कदर नहीं सर्वत्र यौवन का ही मोल है। बेचारी तपती कहाँ छिपाये अपनी भरी जवानी को, विशाल नील कमल सरीखे नेत्र को, पके हुए विम्बफल के समान (अरूण) अधर को, पुष्पसौन्दर्य रूपी सरोवर का पार करने वाले उडुप जैसे समुन्नत पयोधर युगल को। किन्नरी जैसी तपती अपने रूप लावण्य को कहाँ छिपाती? तपती का सौन्दर्य ही उसके स्त्रीत्व पर संकट उत्पन्न कर दिया है। जो सौन्दर्य पूजनीय हुआ करता है, वही आज असहाय होकर इधर–उधर पर आशा की तलाश में झाँक रहा है । लेखक स्त्री के समक्ष एक बहुत बड़ा प्रश्न उपस्थित कर दिया है कि वह अपनी सुरक्षा कैसे करें? जो रक्षक है वही भक्षक बन गया है। जो अधिकारी संरक्षण प्रदान करने वाला है, वही यौवन का प्यासा हो गया है । ऐसी अवस्था में समाज की सामाजिक व्यवस्थएँ विखरने लगती हैं और समाज एक खण्डहर का रूप धारण कर लेता है। वह खण्डहर किसी भवन निर्माण के योग्य नहीं रह जाता है क्योकि निर्माण के लिये तो कठोर और दीर्ण आधारशिला की आवश्यकता होती है। स्त्री ही समाज और राष्ट्र की आधारशिला मानी जाती है। उन्हीं के चरित्र से हमारा समाज पुष्पित एवं पल्लवित होता है। अतः स्त्री को प्रयत्नपूर्वक अपने व्यक्तित्व पर आँच नहीं आने देनी चाहिए और समाज का भी यह

पुनीत कर्त्तव्य होना चाहिए की वह एक नारी सुरक्षा के लिये हर संभव प्रयास करे।

तपती का जीवन भारतीय आदर्श से संस्कारित है। भारतीय सभ्यता एवं सस्कृति उसके रोम –रोम में समाहित है लेकिन मनुष्य परिस्थिती का दास होता है। कहा जाता है मरता क्या न करता? तपती के सामने अपनों की पीड़ा के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। अतीत और वर्तमान जीवन का अन्तर विवेकहीन बना देता है। यदि मनुष्य सम्पन्नता से विपन्नता की ओर या विपन्नता से सम्पन्नता की ओर जब स्वाभिवकता से आगे बढ़ने लगता है तो स्वभावतः उसके मूल्यों में परिवर्तन होने लगता है। उसकी आवश्यकताएँ स्वयं के प्रति उत्तरदायी ठहराने लगती हैं और वह न चाहते हुए भी कुछ ऐसा करने के लिए बाध्य हो जाता है जिससे उसकी समस्या का समाधान निकल सके। तपती के समक्ष भी कुछ इसी प्रकार का प्रश्न खड़ा हो गया है। वह मानवीय स्वभाव के कारण अपने भाई –बहन और माँ की समस्याओं से चिन्तित है; क्योंकि इन सबकी आशा की किरण केवल वही है। तपती अपने शयन कक्ष में पड़ी अतीत के झरोखों से वर्तमान के झुरमुटों को सींचना चाहती है–

"नयनजलमेदुराननना तपती स्वातीतं स्मरति। षोडशवर्षदेशीया हैयङ्गवीनमसृणा बाला! मातुर्दैन्यम् । अनुजस्य स्तनन्धयस्य पोषणम्। अनुजायाश्च शिक्षा प्रबन्धः। एतत् सर्वमपि तपत्यैव करणीयमासीत् ।"[3]

अर्थात् नयन जल से स्निग्ध मुख वाली तपती अपने अतीत को स्मरण करती है। उस सोलह वर्ष की युवती को ही माँ की दीनता, दुधमुंहे छोटे भाई का पोषण और छोटी बहन की शिक्षा समस्या का निवारण करना है। तपती के सामने यह बहुत बड़ी समस्या है। जिस घर में अन्न का एक दाना न हो उस घर की क्या स्थिति होती है? इसका अनुमान लगाया जा सकता है। दुर्दिन के उस पड़ाव पर खड़ी

तपती सब कुछ करने के लिये बाध्य है। उसे उचित और अनुचित का भान नहीं होता है। यह असहाय और नौकरी करने के लिए विवश है। जिसके लिये वह कोई भी मूल्य चुकाने के लिये तैयार हो जाती है। इस प्रकार वह अपने सुयौवन को ही दाव पर लगाकर द्रव्य (नौकरी) प्राप्त करने में सफल हो जाती हैं। हितोपदेश में कहा भी गया है कि **भूभूक्षितः किं न करोति पापम्।**[4]

नवायु में व्यक्ति भावुकता के कारण कभी–कभी गलत निर्णय ले लेता है। तपती का भी उस समय विवेक नष्ट हो गया था। जब उसकी माँ पूछती है पुत्री यह सौ रूपये तुम कहाँ से प्राप्त की हो? इस प्रश्न पर तपती के पैरों तले जमीन खिसक गयी। वह फूट –फूट कर रोने लगी और माँ को बिना बताये सब कुछ बता देती है। लेखक यहाँ जिजीविषा कथा के माध्यम से समाज के हकीकत का तहकीकात करना चाहता हैं। वह खुले मन से स्त्री शोषण का बयान करता है। आज भी हमारे समाज में स्त्री शोषण का नर्तन विद्यमान है, जो एक स्वस्थ समाज की कल्पना को कटघरे में खड़ा करता है। ऐसी घटनाओं का उल्लेख हमें वैदिक साहित्य से भी प्राप्त होता है। इस रूप में मैं छान्दोग्योपनिषद् की उस पंक्ति को उद्धृत करना चाहूँगा जिसमें एक पुत्र को जन्म देने वाली माँ उस पुत्र के पिता का नाम भी नही जानती है। गुरुकुल में हारिद्रूमत गौतम के द्वारा बालक के पिता का नाम (गोत्र) पूछे जाने पर बालक की माँ का उत्तर इस प्रकार है.

सा हैनमुवाच नाहमेतद्वद तात यद्गोत्रस्त्रस्त्वमसिबह्वहं चरन्ती परिचारिणी यौवने त्वामलभे साऽहमेतन्न वेद यद्गोत्रस्त्रस्त्वमसि जबाला तु नामाहमस्मि सत्यकामो नाम त्वमसि स सत्यकाम एव जाबाललो बुवीथा इति।[5]

अर्थात् जबाला ने सत्यकाम से कहा–हे तात! जिस गोत्र वाला तू है मैं उस तेरे गोत्र को नहीं जानती हूँ। तरुणावस्था में जब मैं पति के घर आए हुए अभ्यागतों की परिचर्या में लगी रहती थी उसी

समय मैने तुझे प्राप्त किया था। मैं जबाला हूँ नाम वाली हूँ और तू सत्यकाम नाम वाला है। अतः आचार्य के पूछे जाने पर तू अपने को सत्यकाम जाबाल मैं हूँ, ऐसा कह देना। इस मंत्र का आध्यात्मिक अर्थ जो भी निकाला जाए लेकिन जहाँ स्त्री समाज के रूप में प्रस्तुत किया जाता है वहाँ स्त्री की दशा एवं दिशा के सम्बन्ध में अवश्य प्रश्नचिह्न उपस्थित करता है लेकिन वहीं पिता के स्थान पर माता का नाम उद्धृत करना स्त्री समाज के लिए गौरव की बात है।

तपती को यह बोध हो जाता है कि एक नारी जिसकी प्राण–पण से रक्षा करती है, उसी को मेरे द्वारा समाप्त कर दिया गया। स्त्री का चरित्र ही तो सब कुछ है। स्त्री चरित्र के सम्बन्ध में अभिराज राजेन्द्र मिश्र जी अपने जानकीजीवनम् महाकाव्य में लिखते हैं :

"मृतलता या च्युतवृक्षसंश्रया मृता नदी मुलमुपेत्यमारवम्।
मृताकुलस्त्री पति सौहृदच्युता धिगङ्.गनात्त्वं भवपापमिश्रितम्।।"[6]

अर्थात मर गयी वह लता जो वृक्ष की शाखा से निचे गिर गयी। मर गई वह कुलाँगना जिसे अपने ही पति का प्रेम नहीं मिला। भव पाप से कलंकित स्त्रीत्व को धिक्कार है। युवति तपती भव पाप के बोझ से दबी हुई असहाय सी बन जाती है। माँ का हृदय तो पहले से पति की मृत्यु के बोझ से डूबा हुआ था। तपती का यह कार्य तो उसे और झकझोर देता है। वह पश्चाताप की अग्नि में जलती हुई ईश्वर को भी क्षमा नहीं करती है–

"अन्तर्यामिन! दृष्टोमया भवन्नयायः। समुस्ज्रृम्भमाणँ सौख्यकन्दलं द्रष्टुं न पारयसि । उत्थिातान् पातयसि! पापान् प्रवर्घयसि! साधून सर्वथा खलीकरोषि। अये निर्घृण निष्कृप परमेश्वर! तपतीहृदयतापमपि नानुभूत वानसि? गङ्गाजलं मदिरायितं त्वया? सिन्दुरवारमञ्जरी कामलम्पटाय समर्पिता।"[7]

अर्थात् हे अन्तर्यामी प्रभो! देख लिया मैंने आपका न्याय। अकुंरित

होते हुए सुख के बिरवे को देख नहीं पाते हो। उठे हुए को गिराते हो। पापियों को वरक्कत देते हो। सज्जनों को हर प्रकार से अपमानित करते हो। अरे निर्दय कृपाहीन परमेश्वर! तपती के हृदय का सन्ताप भी तुम अनुभव नहीं कर पाये? गंगाजल को मदिरा बना दिया तुमने। सिन्दुरवार की पुष्पमंजरी को कामलम्पट को सौंप दिया तुमने। ईश्वर के प्रति तपती की माँ का अपार विश्वास था, इस लिये वह अपनी हृदयगत संवेदना को प्रकट कर रही है। वह भारतीय सरकृति में रची–बसी है, उसके संतान भी वैसे ही है। पुत्री के सतीत्व के खँण्डित हो जाने के बाद एक माँ का हृदय पीड़ा से भर जाता है और वह इस दुर्दिन पर ईश्वर के न्याय सिद्धान्त को धिक्कारने लगती है। यह धिक्कार एक नारी हृदय का सहज उदगार है जिसमें समाज के प्रति आक्रोश और पीड़ा दोनों समाहित है।

इक्षुगंधा में नारी जीवन का जो चरित्र लेखक द्वारा प्रस्तुत किया गया है वह भी अत्यन्त साहस का कार्य है। समाज के आदर्श का चित्रण करना तो बहुत आसान होता है। उससे कवि यश की प्राप्ति होती है। लेकिन समाज के यथार्थता में बैठी उसकी निकृष्टता का पर्दाफाश करना तो अपने विरोध को आमन्त्रित करने के समान ही है। वह यथार्थ वर्णन के द्वारा समाज की बुराईयों का नग्न चित्र प्रस्तुत करके जनता को सावधान करना चाहता है। वह पाखण्डी अभिचाररत, तथा स्वार्थपराण अभिव्यक्तियों से सतत् सजग रहने की शिक्षा देता है तथा स्वस्थ्यपरम्पराओं का ही आश्रय लेता है। लेखक ने यहाँ केवल सैद्धान्तिक शिक्षा न देकर व्यावहारिक शिक्षा दी है। व्यवहारकुशलता से ही जीवन सुखी बन सकता है, यही लेखक का लक्ष्य है। 'इक्षुगंधा' में एक और स्त्री पात्र देखने को मिलती है, जिसका नाम वन्दना है। वह अल्पायु में ही विधवा हो गयी है। अपना ससुराल छोड़कर मायका ही उसका बसेरा है। अनिष्ट काल में माता–पिता का आश्रय ही नारी जीवनके आशा का मात्र एक सम्बल हुआ करता है। महाभारत में कहा गया है :

"पतिर्गति समस्थाया विषमे तु पिता गति"[8]

अर्थात अच्छे दिनों में पति स्त्री की ढाल से और बुरे दिनों में पिता। लेकिन वन्दना को यह भी नसीब नहीं है। वन्दना के पिता उसे घर का भार समझते हैं और कहते हैं जब से यह मनुहूस हमारे घर पर है, तब से हमारे घर की प्रसन्नता ही चली गयी है –

"यतः प्रभृति समागतेयमत्र गृहस्य हासो लुप्तः। कियद् वारमुपदिश्टं मया–वत्से। कदाचिद्रामायणँ पठ। गीताभ्यासं कुरू। तुलसीदास्य मीराया वा कानिचित् भजनानि कण्ठस्थ कुरू। न वयं संस्कारहीना निम्नजातीया वा। पुनरपि त्वाँ पाणिभ्याँग्राहयितुं न वयं समर्थाः। एवं सति व्रतोपवासैः धर्माचरणै चैव जीवनयात्रा सम्पादयितुं शक्ष्यते। परिन्त्वयं हतभाग्या तत्सर्वं न करिस्यति।"[9]

अर्थात् जब से यह यहाँ आयी है, घर की हँसी गायब हो गयी। कितनी बार मैने समझाया–बेटी। कभी रामायण पढ़ो। गीता का परायण करो। तुलसीदास या मीरा के कुछ भजनों को कठस्थ करो । हम लोग संस्कार विहीन नहीं है या नीची जाति के नहीं है। हम तुम्हारा पुनर्विवाह संस्कार नहीं कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में व्रत, उपवास और धर्माचरण के द्वारा ही जीवन–यापन किया जा सकता है। परन्तु यह अभागिन वह सब नहीं करती। हमारा समाज इन कुरीतियों में जकड़ा अपने सन्तति को केवल परमार्थ की असमय में शिक्षा देने लगता है। वन्दना अभी युवति है, उसके मानस में जीवन के बहुत राग–रंग होंगे। उसके स्वप्नों को उपदेशों की दीवारों में इस प्रकार कैद करना कदापि उचित नहीं है। पिता के घर भी उसे प्रताड़ना के अतिरिक्त कुछ और नहीं मिलता है वहाँ पुत्री का पुनर्विवाह मर्यादा के विपरीत माना जाता है। पुत्री के सुख का नहीं पिता को अपने अभिमान और मर्यादा की चिंता है। वन्दना पिता के घर में बोझ बनी हुई है। पिता,भाई और भाभी के तरह – तरह के उलाहनों से

थकी वह एक दिन अपने युवक साथी के साथ रहने का निश्चय कर लेती है–

"सम्प्रति नायं मे पिता न चाहं तनायास्य! स्वभविष्यपथनिर्माण मयैव करणीयं विद्यते। सहृदयजननी पुनर्विवाहार्थ माँ बहुशो मन्त्रयते। मत्सतीर्थ्यों जयदेव इदानीमपि मत्पाणी याचते। तेन सार्धं निवसन्ती भार्याधर्मञ्च पालयन्त्यहं सर्वमैहिकमामुष्मिकञ्च कल्याणँ प्राप्स्यासि।"[10]

अर्थात् अब न यह मेरा पिता है और न मैं इनकी बेटी। अपने भविष्य पथ का निर्माण मुझे स्वयं ही करना है। सहृदया माँ पुनर्विवाह के लिये मुझसे कई बार कहती रही है। मेरा सहपाठी जयदेव अब भी मेरा हाथ माँगता है। उसके साथ रहते हुए पत्नीधर्म का पालन करते हुए, मैं समस्त लौकिक तथा पारलौकिक कल्याण को प्राप्त करूँगी। इस प्रकार हम यहाँ देखते हैं कि समाज ही नारी को इतनी कठोर बन्धन में रखना चाहता है कि वह उस बन्धन को तोड़कर स्वयं बाहर आने के लिये विवश हो जाती है।

अनामिका नामक कथाशँ में कन्या के प्रति सामाजिक सोच एवं धारणा का प्रकाशन भी लेखक ने किया है। किसी नवजात कन्या को इलाहाबाद नगर के समीप किसी नाले के किनारे छोड़ दिया गया था। लेखक भी वहाँ एकत्र भीड़ में शामिल होकर समाज की यथार्थता को समझने का प्रयास करता है। लेखक को किसी ने उस सुकुमारी कन्या के विषय में बताया है–

"तथापि कृपया भवानपि सकुताँ पश्यतु। न जाने हिन्दुकुक्षिजात यवनवंशीया वा। तथापि पाटलपुष्पसन्निभा बर्तते सा।"[11]

अर्थात् कृपा करके आप भी उसे एक बार देख लें। न जाने किसी हिन्दू औरत की कोख से जन्मी है या मुस्लिम खानदान की है। फिर

भी है एकदम गुलाब की फूल जैसी है। वह कन्या अतिसुकुमार और सुन्दर है। हमारे समाज में कन्या के प्रति लोगों की भावना ठीक नहीं रहती है। उस कन्या को देखने के लिये बहुत सेलोग एकत्रित हुए थे लेकिन जब कन्या को गोद लेने की बात आई तो सभी लोग धीरे–धीरे वहाँ से चलते बने। थानाध्यक्ष सभी पुरवासियों से निवेदन करता है कि साक्षात् भगवती ने अवतरित होकर सभी मानवों की परीक्षा ले रही है–

"धवलतया साक्षात् भगवती गौरी प्रतिभाति। ईशदुद्भिन्न कमलपुष्पमिव नयन युगलम्। मन्ये साक्षात् भगवती भागीरथ्येव कन्याभावमुपगम्यप्रयागवसिनाँ सहृदयत्वं परीक्षते।"[12]

अर्थात् यह कन्या अपने गोरेपन से साक्षात् भगवती गौरी प्रतीत हो रही है। जरा–जरा सा खुले हुए नील कमल पुष्प सरीखी इसकी आँखें हैं। मैं तो मानता हूँ स्वयं भगवती भागीरथी ही कन्याभाव को प्राप्त होकर प्रयागवासियों की सहृदयता की परीक्षा ले रही हैं। इस प्रकार के कहने पर भी प्रयागवासियों के हृदय में किसी प्रकार की संवेदना का संचार नहीं हुआ लेकिन लेखक संस्कृत के प्राध्यापक होने के कारण थानेदार के हर शब्द को अपने ही ऊपर मानते हुए उस 'अनामिका'नामक कन्या को अपना लेता है –

"आसन्दिकातः समुत्थाय मया यंत्रचालितेनेव साश्नामिका बालानिजोत्सङ्गे गृहीता। अधिष्ठानाधिकृत माँ प्रश्नाक्तनेत्राभ्याँ पश्यन्नासीत्। मयोत्तरितम्–इदानीं सर्वमुपपन्नम् यत्र कूत्रापि ममहस्ताक्षरमपेक्ष्येत दातुं तत्परोऽस्मि। आश्चर्यानन्दविस्फारितनेत्राभ्याँ कार्त–'ड्याँश्रुवर्षणँकुर्वन्नतिधकृत् रक्षिणामेतावदेव जगाद–गच्छ, मद्व्ययेन सपादकिलोमितं लड्डुकं त्वरितमानय। भगवत्या भागीरथ्याः प्रसादं वितरिस्याम्यत्रैव।"[13]

अर्थात् कुर्सी से उठकर यंत्र चालित के समान मैंने उस बेनाम

कन्या को अपनी गोद में उठा लिया। थानाध्यक्ष प्रश्नभरी आँखों से मुझे देख रहा था। मैंने उसे उत्तर दिया– अब सब कुछ संपन्न हो गया। जहाँ कही भी मेरे हस्ताक्षर की आवश्यकता हो, मैं देने को तत्पर हूँ। आश्चर्य और आनन्द से विस्फारित नेत्रों से कृतज्ञता के आसुओं की वर्षा करता हुआ थानेदार सिपाही से बस इतना ही बोला कि उसने अपने सहकर्मियों को आदेश दिया–जाओं मेरे पैसे से सवा किलो लड्डू तुरन्त ले आओ। मैं यहीं पर भगवती गंगा का प्रसाद बाटूगाँ। प्राध्यापक ही उस भीड़ में एक बुद्धिजीवि व्यक्ति थे, संस्कृत के विद्वान थे अतः वे इस कार्य के लिये स्वयं को सबसे अधिक जिम्मेदार मानते रहे और उस कन्या को अपना लेते हैं।

इस प्रकार लेखक स्त्री के तीन रूपों को चित्रित किया है। एक वह जब युवती है, दूसरी जब वह विधवा हो जाती है और तीसरी वह कन्या के रूप में जन्म लेती हैं। इन तीनों कथाओं के द्वारा लेखक ने सामाजिक दोषों को चित्रित किया हैं, जिसका उद्देश्य मात्र इतना ही है कि इन कुरूतियों को अपने देश से मिटाना है तथा एक स्वस्थ समाज की स्थापना करना है क्योंकि स्वस्थ समाज से ही स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण सम्भव है। पाश्चात्य विद्वान् अरस्तु ने भी ठीक ही कहा है **"स्त्रियों की उन्नति या अवनति पर ही राष्ट्र की उन्नति या अवनति निर्भर है।"**[13]

स्त्री मानव समाज की एक विशेष अंग है। जब तक मानव समाज में स्त्री के हित एवं कर्त्तव्य पालन का बोध नहीं होगा तब तक यह देश पूर्ण स्वराज का दर्जा नहीं प्राप्त कर, कुरूतियों एवं रुढियों में फंसा कराहता ही रहेगा। मिशन शक्ति अभियान का यह उददेश्य है कि हमें इस प्रकार की सामाजिक कुरूतियों को समाप्त करके महिलाओं को सम्मानित जीवन जीने का अवसर प्रदान करना है।

सन्दर्भ–सूची

1. मनुस्मृति, 8.56
2. इक्षुगंधा, जिजीविषा, पृष्ठ 30
3. वही, पृष्ठ 29–30
4. हितोपदेश ,सन्धि, 60
5. छान्दोग्योपनिषद् ,4.4.2
6. जानकीजीवनम् ,15.59
7. इक्षुगंधा, जिजीविषा, पृष्ठ 34
8. महाभारत, उद्योगपर्व, 178.24
9. इक्षुगंधा, भग्नपञ्जरः, पृष्ठ 103
10. वही, पृष्ठ 109
11. वही, अनामिका, पृष्ठ 63
12. वही, पृष्ठ 68
13. वही, पृष्ठ 70
14. गुप्त रमाशँकर, सूक्तिसागर, पृष्ठ 723